

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 11 अध्याय 11: दो पक्षी एक वृक्ष

23 September 2026



भगवान् श्रीकृष्ण उद्धव के बन्धन तथा मुक्ति सम्बन्धी प्रश्न का उत्तर देते हैं, यह दर्शाते हुए कि वास्तविक आत्म-स्वरूप में न बन्धन है न मुक्ति, इस सत्य को एक वृक्ष पर दो पक्षियों की प्राचीन उपमा से स्पष्ट करते हुए, और एक सच्चे साधु के लक्षण तथा प्रेममयी भक्ति के अनेक रूपों का वर्णन करते हुए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है, जो श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं तथा शिक्षाओं के माध्यम से एक भक्तिपूर्ण यात्रा है। पिछले अध्याय में उद्धव ने पूछा था कि आत्मा, प्रकृति के गुणों से वस्तुतः भिन्न होते हुए भी, उनसे बँधती कैसे है। यहाँ भगवान् बड़ी कोमलता तथा गहराई से उत्तर देते हैं। बन्धन तथा मुक्ति, वे समझाते हैं, आत्मा में केवल उनकी माया से उत्पन्न गुणों के कारण हैं; उनके अपने स्वरूप में न तो कोई है। वे एक वृक्ष पर बैठे दो पक्षियों की चिरन्तन उपमा देते हैं — एक उसके फल चखता तथा उनसे बँधा, दूसरा शान्त तथा मुक्त — देहधारी आत्मा तथा भीतर स्थित भगवान् के भेद को दिखाने के लिए। तत्पश्चात् वे बताते हैं कि मुक्त आत्मा संसार में कैसे रहती है, आकाश के समान अछूती, और साधक उस मुक्ति तक कैसे पहुँच सकता है — मन को उन पर स्थिर करके या, ऐसा न कर सकने पर, उनके लिए कर्म करके तथा उनकी महिमा सुनकर एवं गाकर। जब उद्धव पूछते हैं कि किसे सच्चा साधु माना जाए और कौन-सी भक्ति उन्हें सबसे प्रिय है, तब भगवान् साधु का एक सुन्दर चित्र खींचते हैं और भक्ति के अनेक प्रेममय रूप प्रकट करते हैं।

अध्याय को जानकारो

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 11 (एकादश स्कन्ध)
- अध्याय: 11 (एकादश प्रवचन)
- अध्याय शीर्षक: बद्ध तथा मुक्त जीव, एवं भक्ति के लक्षण
- प्रधान वक्ता: श्रीकृष्ण, उद्धव को उपदेश देते हुए; समस्त सुकदेव गोस्वामी द्वारा राजा परीक्षित को कहा गया
- प्रधान श्रोता: उद्धव; तथा, कथा के ढाँचे में, राजा परीक्षित
- मुख्य स्थान: द्वारका, भगवान् के प्रस्थान की पूर्वसंध्या पर उद्धव के साथ संवाद में
- केन्द्रीय विषय: बन्धन तथा मुक्ति का स्वरूप, एक वृक्ष पर दो पक्षी, मुक्त आत्मा का आचरण, सच्चे साधु के लक्षण, तथा प्रेममयी भक्ति के अनेक रूप
- प्रधान श्लोक-सीमा: स्कन्ध 11, अध्याय 11, श्लोक 1-49
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

पिछले अध्याय का सन्दर्भ

अध्याय 10 में, भगवान् ने उद्धव को कामना रहित कर्म, सच्चे गुरु की सेवा, तथा आत्मा को शरीर से भिन्न जानना सिखाया; और सांसारिक एवं स्वर्गीय दोनों भोगों की रिक्तता उजागर की। अध्याय का समापन तब हुआ जब उद्धव ने पूछा कि आत्मा, प्रकृति के गुणों से भिन्न होते हुए भी, उनसे बँधती कैसे है, और बद्ध तथा मुक्त को कैसे पहचाना जाए। यह अध्याय भगवान् का प्रेममय उत्तर है।

बन्धन तथा मुक्ति गुणों के कारण हैं

भगवान् ने आरम्भ में प्रकट किया कि ऐसे पद केवल वहीं लागू होते हैं जहाँ प्रकृति के गुण कार्यरत हों, आत्मा के वास्तविक स्वरूप को वे कभी स्पर्श नहीं करते; और चूँकि वे गुण स्वयं उनकी ही माया से उद्भूत हैं, अतः भगवान् सदा-सर्वदा बन्धन तथा मुक्ति दोनों से परे रहते हैं।

श्रीभगवानुवाच

बद्धो मुक्त इति व्याख्या गुणतो मे न वस्तुतः ।

गुणस्य मायामूलत्वान्न मे मोक्षो न बन्धनम् ॥ १ ॥

śrī-bhagavān uvāca baddho mukta iti vyākhyā guṇato me na vastutaḥ guṇasya māyā-mūlatvān na me mokṣo na bandhanam

अर्थ: भगवान् ने कहा: “बद्ध” तथा “मुक्त” ऐसे शब्द हैं जो आत्मा पर केवल प्रकृति के गुणों के कारण लागू होते हैं, वस्तुतः नहीं; और चूँकि गुण मेरी माया में मूल रखते हैं, मेरे लिए न बन्धन है न मुक्ति। (स्कन्ध 11, अध्याय 11, श्लोक 1)

स्वप्न के शोक तथा हर्ष के समान, उन्होंने कहा, दुःख तथा आनन्द, और शरीर का धारण या त्याग, आत्मा पर केवल मिथ्या रूप से आरोपित हैं; संसरण भी अन्ततः वास्तविक नहीं, अपितु केवल अज्ञान से आत्मा पर आरोपित है। ज्ञान तथा अज्ञान, उन्होंने प्रकट किया, उनकी दो अनादि शक्तियाँ हैं, उनकी माया से उत्पन्न — एक मुक्ति के लिए, दूसरी बन्धन के लिए। बन्धन अनादि काल से अज्ञान के कारण जीव से चिपका है, और मुक्ति उसी जीव द्वारा ज्ञान से प्राप्त होती है।

एक वृक्ष पर दो पक्षी

बद्ध तथा मुक्त आत्मा के भेद को दिखाने के लिए, भगवान् ने समस्त शास्त्रों की सर्वाधिक प्रिय उपमाओं में से एक दी — एक ही वृक्ष पर साथ बैठे दो पक्षी।

सुपणवितौ सदृशौ सखायौ
यदृच्छयैतौ कृतनीडौ च वृक्षे ।
एकस्तयोः खादति पिप्पलान्न-
मन्यो निरन्नोऽपि बलेन भूयान् ॥ ६ ॥

*suparṇāv etau sadṛśau sakhāyau yadṛccchayaitau kṛta-nīḍau ca vṛkṣe ekas tayoh khādati
pippalānnam anyo niranno 'pi balena bhūyān*

अर्थ: दो पक्षी, समान तथा सखा, संयोगवश एक ही वृक्ष पर साथ अपना घोंसला बना चुके हैं; उनमें से एक वृक्ष का फल खाता है, जबकि दूसरा, कुछ न खाते हुए भी, बल में अधिक है। (स्कन्ध 11, अध्याय 11, श्लोक 6)



भगवान् एक वृक्ष पर दो पक्षियों की चिरन्तन उपमा देते हैं — देहधारी आत्मा जो वृक्ष का फल चखती तथा उससे बँधती है, और भीतर स्थित भगवान्, जो कुछ नहीं खाते फिर भी सदा अधिक तथा मुक्त हैं (श्लोक 6)।

जो पक्षी फल नहीं खाता — भीतर स्थित भगवान् — वह स्वयं को तथा अपने सखा दोनों को जानता है; किन्तु जो खाता है, वह जीव, नहीं जानता। पहला ज्ञान से सदा मुक्त है; दूसरा अज्ञान से अनादि काल से बद्ध है। तथापि जिस क्षण जीव जागता है, बन्धन गिर जाता है।

मुक्त आत्मा कैसे रहती है

ज्ञानी आत्मा, भगवान् ने कहा, शरीर में निवास करते हुए भी उससे बँधी नहीं — जैसे स्वप्न से जागा व्यक्ति स्वप्न से नहीं बँधा रहता, यद्यपि उसे स्मरण रहे; जबकि मोहग्रस्त व्यक्ति, शरीर से तादात्म्य कर, उसमें उतना ही फँसा रहता है जितना स्वप्न देखने वाला अपने स्वप्न में।

देहस्थोऽपि न देहस्थो विद्वान् स्वप्नाद् यथोत्थितः ।

अदेहस्थोऽपि देहस्थः कुमतिः स्वप्नदृग् यथा ॥ ८ ॥

deha-stho 'pi na deha-stho vidvān svapnād yathotthitaḥ adeha-stho 'pi deha-sthaḥ kumatih svapna-dṛg yathā

अर्थ: शरीर में निवास करते हुए भी, ज्ञानी उसमें बद्ध नहीं, स्वप्न से जागे व्यक्ति के समान; जबकि मूर्ख, यद्यपि वास्तव में शरीर का नहीं, उससे बँधा अनुभव करता है, स्वप्न में खोए व्यक्ति के समान। (स्कन्ध 11, अध्याय 11, श्लोक 8)



मुक्त आत्मा शरीर में निवास करती है फिर भी उससे मुक्त रहती है — स्वप्न से जागे व्यक्ति के समान — संसार से उतनी ही अछूती जितना आकाश उन बादलों से जो उसमें बहते हैं (श्लोक 8)।

ऐसी आत्मा इन्द्रियों को उनके विषयों से मिलने देती है फिर भी अविचल रहती है, विश्राम करती, बैठती, चलती, देखती, खाती तथा सुनती हुई बँधती नहीं, आकाश, जल में प्रतिबिम्बित सूर्य, या सदा गतिशील वायु के समान अनासक्त। वैराग्य से तीक्ष्ण की गई बुद्धि से अपने सन्देह काटकर, वह विविधता के भ्रम से वैसे मुड़ जाती है जैसे कोई जागने पर स्वप्न से। वह अविचल रहती है चाहे क्रूरों से पीड़ित हो या कृपालुओं से सम्मानित। सबको समदृष्टि से देखते हुए, वह न भले कर्म करने वालों की प्रशंसा करती है, न बुरे करने वालों की निन्दा।

न स्तुवीत न निन्देत कुर्वतः साध्वसाधु वा ।
वदतो गुणदोषाभ्यां वर्जितः समदृङ्मुनिः ॥ १६ ॥

na stuvīta na nindeta kurvataḥ sādhu asādhu vā vadato guṇa-doṣābhyāṁ varjitaḥ sama-dṛṅ muniḥ

अर्थ: समदृष्टि मुनि, गुण तथा दोष के भाव से मुक्त, उन लोगों की न प्रशंसा करता है न निन्दा जो कर्म करते या बोलते हैं, चाहे भला या बुरा।
(स्कन्ध 11, अध्याय 11, श्लोक 16)

जो अभी भी प्रयत्नशील हैं उनके लिए मार्ग

सभी मन को अविचल रूप से परम में नहीं टिका सकते; अतः भगवान् ने उनके लिए जो अभी प्रयत्नशील हैं एक कोमल मार्ग दिया। यदि कोई मन को ब्रह्म पर स्थिर न रख सके, तो अपने समस्त कर्म उन्हें अर्पित करे, प्रत्येक कर्तव्य भली-भाँति तथा स्वार्थ रहित होकर, उनके लिए करे।

यद्यनीशो धारयितुं मनो ब्रह्मणि निश्चलम् ।
मयि सर्वाणि कर्माणि निरपेक्षः समाचर ॥ २२ ॥

yady anīśo dhārayitum mano brahmaṇi niścalam mayi sarvāṇi karmāṇi nirapekṣaḥ samācara

अर्थ: यदि तुम मन को ब्रह्म पर अविचल रूप से स्थिर न रख सको, तो अपने समस्त कर्म मेरे लिए करो, किसी स्वार्थपूर्ण अपेक्षा से मुक्त होकर।
(स्कन्ध 11, अध्याय 11, श्लोक 22)

सबसे बढ़कर, भगवान् ने कहा, मनुष्य अपने हृदय को उनकी कथाओं तथा स्मरण में डुबो दे।

श्रद्धालुर्मत्कथाः शृण्वन् सुभद्रा लोकपावनीः ।
गायन्ननुस्मरन् कर्म जन्म चाभिनयन् मुहुः ॥ २३ ॥
मदर्थे धर्मकामार्थानाचरन् मदपाश्रयः ।
लभते निश्चलां भक्तिं मय्युद्धव सनातने ॥ २४ ॥

śraddhālur mat-kathāḥ śṛṇvan su-bhadrā loka-pāvanīḥ gāyann anusmaran karma janma cābhinayan muhuḥ mad-arthe dharma-kāmārthān ācaran mad-apāśrayaḥ labhate niścalāṁ bhaktim mayy uddhava sanātane

अर्थ: श्रद्धापूर्वक मेरी मंगलमयी, लोक-पावन कथाओं को सुनते हुए, उन्हें गाते तथा मेरे कर्मों एवं अवतार का निरन्तर स्मरण करते हुए, उन्हें बार-बार अभिनीत करते हुए, और धर्म, भोग तथा अर्थ को मेरे लिए साधते हुए, मेरी शरण लेकर — इस प्रकार, हे उद्धव, मनुष्य मुझ नित्य में अविचल भक्ति प्राप्त करता है। (स्कन्ध 11, अध्याय 11, श्लोक 23-24)



भगवान् भक्ति का सुनिश्चित मार्ग दिखाते हैं — श्रद्धापूर्वक उनकी गौरवमयी कथाओं तथा लीलाओं को सुनना, गाना तथा स्मरण करना, जब तक हृदय नित्य के प्रति अविचल प्रेम प्राप्त न कर ले (श्लोक 23-24)।

सन्तों के संग में पोषित भक्ति से सम्पन्न होकर, ऐसा व्यक्ति उनका उपासक बन जाता है और सहज ही उनकी अपनी अवस्था को प्राप्त करता है।

सच्चे साधु के लक्षण

यह सुनकर, उद्धव ने भगवान् से पूछा कि वे किस प्रकार के व्यक्ति को सच्चा साधु मानते हैं, और कौन-सी भक्ति उन्हें सबसे प्रिय है। भगवान् ने साधु का एक ज्योतिर्मय चित्र प्रस्तुत करते हुए उत्तर दिया।

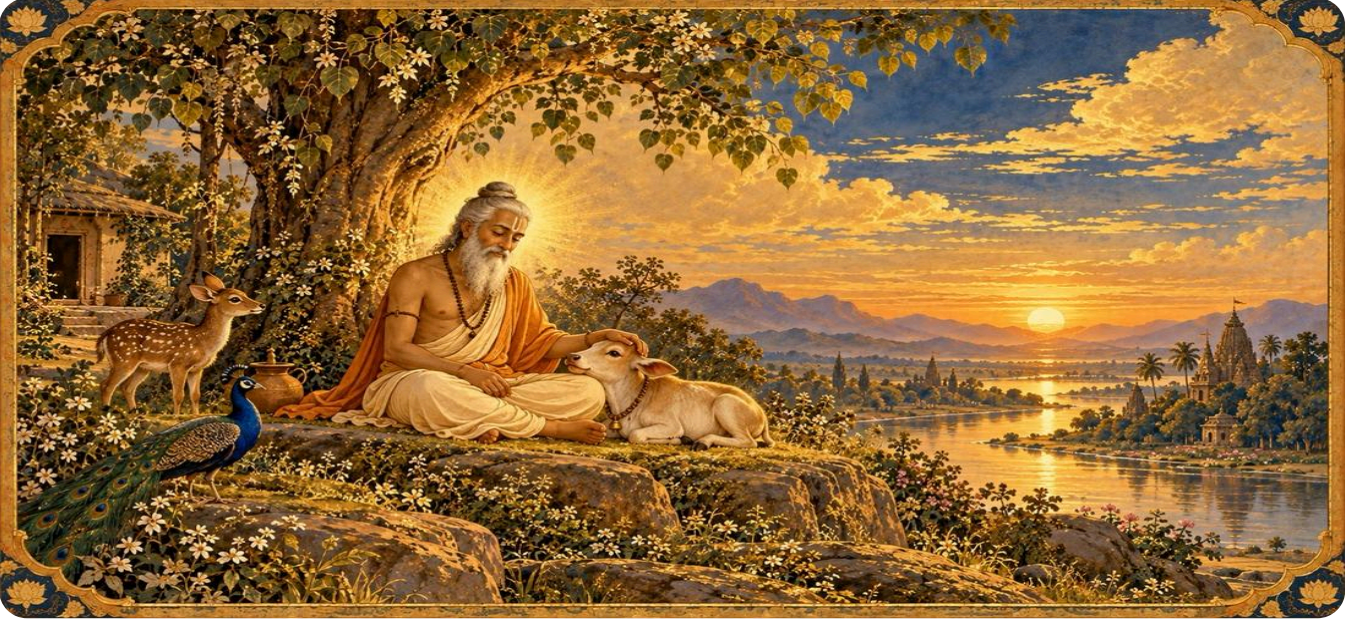
श्रीभगवानुवाच

कृपालुरकृतद्रोहस्तिक्षुः सर्वदेहिनाम् ।

सत्यसारोऽनवद्यात्मा समः सर्वोपकारकः ॥ २९ ॥

śrī-bhagavān uvāca kṛpālur akṛta-drohas titikṣuḥ sarva-dehinām satya-sāro 'navadyātmā samaḥ sarvopakārakaḥ

अर्थ: भगवान् ने कहा: सच्चा साधु कृपालु है और किसी को हानि नहीं पहुँचाता; वह समस्त प्राणियों के प्रति सहनशील है, सत्य ही जिसका बल है, निर्दोष हृदय वाला, समचित्त, और सबके कल्याण के लिए कार्यरत। (स्कन्ध 11, अध्याय 11, श्लोक 29)



भगवान् एक सच्चे साधु का चित्र खींचते हैं — कृपालु, अहिंसक, सहनशील तथा समचित्त, सबके कल्याण के लिए कार्यरत और केवल उन्हीं की शरण में (श्लोक 29)।

ऐसा व्यक्ति, उन्होंने आगे कहा, कामनाओं से अविचलित, आत्मसंयमी, कोमल, पवित्र तथा अपरिग्रही, प्रयत्नहीन तथा थोड़े में सन्तुष्ट, शान्त, स्थिर, केवल भगवान् की शरण लेने वाला; सजग, गम्भीर हृदय वाला, धैर्यवान्, भूख-प्यास, शीत-ताप, लोभ-मोह इन छह वेगों को जीतने वाला; किसी सम्मान की इच्छा न करते हुए भी दूसरों को सम्मान देने वाला, मैत्रीपूर्ण, करुणामय तथा ज्ञानी होता है। और सबमें श्रेष्ठ, भगवान् ने कहा, वह है जो, कर्तव्यों के पुण्य तथा उनकी उपेक्षा के दोष को भली-भाँति जानते हुए भी, समस्त विहित कर्तव्यों को त्यागकर केवल उन्हीं की उपासना करता है; क्योंकि जो अनन्य भक्ति से उनकी उपासना करते हैं — चाहे वे उनकी महिमा को पूर्णतः जानें या न जानें — वे उन्हें सबसे प्रिय हैं।

प्रेममयी भक्ति के अनेक रूप

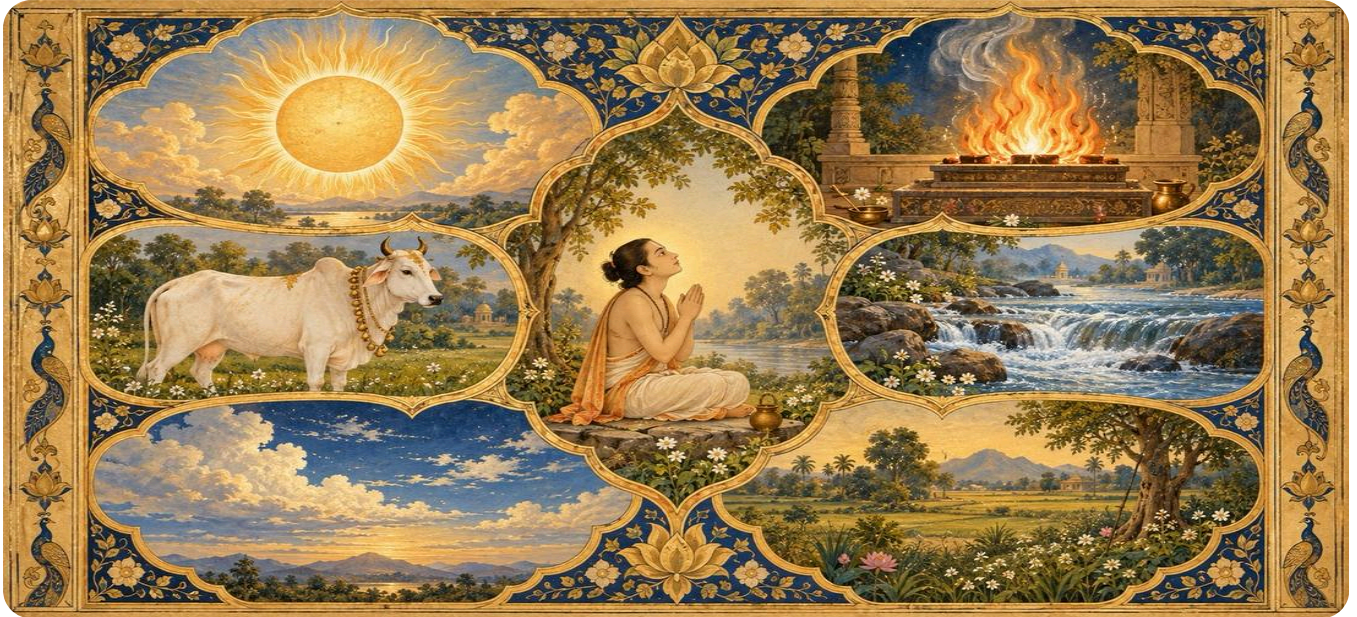
तत्पश्चात् भगवान् ने उनके प्रति प्रेम की व्यक्त होने की असंख्य रीतियों का वर्णन किया: उनकी मूर्तियों तथा उनके भक्तों को देखना, स्पर्श करना तथा पूजना; उनकी सेवा तथा स्तुति करना; प्रणाम करना तथा उनके गुणों एवं कर्मों का कीर्तन करना; श्रद्धापूर्वक उनकी कथाएँ सुनना तथा उनका ध्यान करना; उन्हें अपने समस्त लाभ तथा अपना स्वयं सेवा में अर्पित करना; उनके अवतार के उत्सव गान, नृत्य तथा वाद्य के साथ मनाना; तीर्थयात्रा करना; उनके मन्दिरों को विनम्र, निष्कपट हाथों से बनाना तथा सँवारना; और संसार में तथा अपने को जो सबसे प्रिय हो, वही उन्हें अर्पित करना, क्योंकि ऐसा अर्पण अमरता का फल देता है। उन्होंने यह भी प्रकट किया कि उनकी उपासना सर्वत्र, अनेक पावन रूपों में की जा सकती है।

सूर्योऽग्निर्ब्राह्मणा गावो वैष्णवः खं मरुज्जलम् ।

भूरात्मा सर्वभूतानि भद्र पूजापदानि मे ॥ ४२ ॥

sūryo 'gnir brāhmaṇā gāvo vaiṣṇavaḥ khaṁ maruj jalam bhūr ātmā sarva-bhūtāni bhadra pūjā-padāni me

अर्थ: सूर्य, अग्नि, ब्राह्मण, गौएँ, विष्णु का भक्त, आकाश, वायु, जल, पृथ्वी, अपनी आत्मा तथा समस्त प्राणी — ये, हे सौम्य, वे स्थान हैं जिनमें मेरी उपासना की जा सकती है। (स्कन्ध 11, अध्याय 11, श्लोक 42)



भगवान् प्रकट करते हैं कि उनकी उपासना सर्वत्र की जा सकती है — सूर्य तथा अग्नि में, गौ तथा सन्त में, पृथ्वी, जल, वायु तथा आकाश में, और प्रत्येक जीव में (श्लोक 42)।

तत्पश्चात् उन्होंने सिखाया कि प्रत्येक में उन्हें कैसे सम्मानित किया जाए: सूर्य में पावन मन्त्रों से, अग्नि में आहुतियों से, एक योग्य ब्राह्मण में आतिथ्य से, गौओं में चारे से, विष्णु के भक्त में प्रेममय ध्यान से, अपने ही हृदय में स्थिर ध्यान से, और समस्त प्राणियों में श्रद्धापूर्ण सेवा से — जिससे समस्त जीवन उनके प्रति एक अर्पण बन जाए।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. बन्धन तथा मुक्ति गुणों के कारण हैं, आत्मा के नहीं। आत्मा केवल भगवान् की माया से उत्पन्न प्रकृति के गुणों के कारण बद्ध या मुक्त कही जाती है; वस्तुतः आत्मा अछूती है (श्लोक 1-5)।
2. एक वृक्ष पर दो पक्षी। देहधारी आत्मा शरीर का फल चखती तथा बँधती है; भीतर स्थित भगवान् कुछ नहीं चखते तथा सदा मुक्त हैं — और उनके प्रति जागरण समस्त बन्धन समाप्त करता है (श्लोक 6-8)।
3. मुक्त आत्मा संसार में अछूती रहती है। जल में प्रतिबिम्बित सूर्य, निर्मल आकाश अथवा निरन्तर प्रवाहित वायु की भाँति, वह इन्द्रिय-व्यापार के बीच रहते हुए भी किसी भी वस्तु से बन्धन में नहीं आती, पूर्णतः निर्लिप्त एवं स्थिरचित्त (श्लोक 9-17)।
4. जो वाणी भगवान् की महिमा नहीं गाती, वह निष्फल है। जो वाणी उनके कर्मों को नहीं गाती, वह साक्षात्कार बिना विद्या की भाँति, कोई सच्चा फल नहीं देती; बुद्धिमान् अपनी वाणी को उनकी महिमा से भर देते हैं (श्लोक 18-20)।
5. यदि मन स्थिर न कर सको, तो उनके लिए कर्म करो तथा गाओ। अपने समस्त कर्तव्य भगवान् को अर्पित करना, और उनकी कथाएँ सुनना, गाना तथा स्मरण करना, अविचल भक्ति में परिपक्व होता है (श्लोक 21-25)।

6. साधु के लक्षण, तथा भक्ति के अनेक रूप। सच्चा साधु कृपालु, अहिंसक, सहनशील तथा आत्मसंयमी है; और भगवान् के प्रति प्रेम असंख्य रीतियों से व्यक्त हो सकता है, क्योंकि उनकी उपासना समस्त प्राणियों में की जा सकती है (श्लोक 29-49)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय के हृदय में उनके एक वृक्ष पर दो पक्षी चमकते हैं — इतनी सरल उपमा कि बालक भी उसे चित्रित कर सके, फिर भी इतनी गहरी कि आत्मा का समस्त रहस्य समेट ले। हम वही छोटा पक्षी हैं, फल-दर-फल फुदकते, मिठास तथा कड़वाहट चखते, बारी-बारी हर्षित तथा विषण्ण। और इसी बीच, उसी शाखा पर, हमारा मौन सखा बैठा है, जो कुछ नहीं खाता तथा कुछ नहीं चाहता, शान्त तथा बलवान् — भीतर स्थित भगवान्, हमारी अपनी चंचलता से भी हमारे अधिक निकट। अध्याय का वचन यह है कि हमारा बन्धन हमारे स्वभाव में बुना नहीं है; वह केवल एक लम्बा विस्मरण है, और वह उसी क्षण समाप्त हो जाता है जब हम मुड़कर उन्हें अपने साथ सच्चे मन से देख लेते हैं। और भगवान् हमें किसी दूर प्रतीत होती मुक्ति के पीछे तनाव में नहीं छोड़ते। यदि हम अभी मन स्थिर न कर सकें, वे कहते हैं, तो केवल उनके लिए जीएँ, और अपने दिन उनकी कथाओं, उनके नाम, उनकी स्तुति से भर दें — और प्रेम स्वयं ही बढ़ेगा। शायद सबसे मार्मिक उनका साधु का चित्र है: कठोर तपस्या की कोई मूर्ति नहीं, अपितु वह जो दयालु, अहिंसक, धैर्यवान् तथा दूसरों को सम्मान देने में प्रसन्न है, अपने लिए कोई सम्मान न चाहते हुए। यह चित्र केवल सराहने का नहीं, अपितु उसकी ओर बढ़ने का है, एक-एक कोमल गुण से, जब तक हमारा अपना छोटा पक्षी शान्त होकर अन्ततः अपने सखा के पास विश्राम न कर ले।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, कुछ मिनट दो पक्षियों के चित्र के साथ शान्त बैठिए। स्वयं को वह छोटा पक्षी समझिए, दिन के सुखों तथा चिन्ताओं के फलों में व्यस्त, और फिर उसी शाखा पर अपने साथ बैठे भगवान् के प्रति सजग हो जाइए — निकट, धैर्यवान् तथा मुक्त। उस सजगता में विश्राम करते हुए, उन्हें एक छोटी वस्तु धीरे से अर्पित कीजिए: उनके लिए किया गया एक कार्य, या सुनी या गाई उनकी कुछ कथाएँ। उनके पवित्र नाम का धीरे से जप कीजिए: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” सदा निकट रहने वाले उस सखा की ओर मुड़ने के इस सरल कार्य में, आप इस अध्याय के मर्म का ही अनुसरण करते हैं — चंचल पक्षी को शान्त होने देते हुए, और उस मुक्ति का स्वाद लेने लगते हुए जो सदा आपके साथ ही रही है।

उपसंहार

एकादश स्कन्ध का एकादश प्रवचन बन्धन तथा मुक्ति के विषय में उद्धव के गहन प्रश्न का उत्तर देता है। भगवान् सिखाते हैं कि दोनों आत्मा में केवल प्रकृति के गुणों के कारण हैं, उनकी माया से उत्पन्न, और वस्तुतः आत्मा को कभी नहीं छूते। वे एक वृक्ष पर दो पक्षियों की चिरन्तन उपमा देते हैं — जो आत्मा फल खाती तथा बँधती है, और भीतर स्थित भगवान् जो कुछ नहीं खाते तथा सदा मुक्त हैं — और दिखाते हैं कि मुक्त आत्मा संसार में आकाश के समान अछूती कैसे रहती है। जो अभी प्रयत्नशील हैं, उनके लिए वे एक कोमल मार्ग देते हैं: उनके लिए कर्म करना तथा उनकी महिमा सुनना, गाना एवं स्मरण करना जब तक भक्ति अटल न हो जाए। और जब उद्धव पूछते हैं कि सच्चा साधु किसे कहें, तब भगवान् करुणा, अहिंसा तथा आत्मसंयम का एक दीप्तिमान् चित्र देते हैं, और भक्ति के व्यक्त होने के अनेक प्रेममय रूप प्रकट करते हैं — क्योंकि उनकी उपासना सूर्य तथा अग्नि में, गौ तथा सन्त में, पृथ्वी, जल तथा प्रत्येक जीव में की जा सकती है। इस प्रकार अध्याय हमें उस मुक्ति तथा उस प्रेम की ओर खींचता है जो सदा निकट हैं, केवल हमारे मुड़ने की प्रतीक्षा में।

श्रीमद्भागवतम् की दिव्य वाणी हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), एकादश स्कन्ध, एकादश प्रवचन, पृष्ठ 560–566।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक से किसी सम्बन्ध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-11-adhyay-11-baddha-mukta-jeev-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट